उपन्यास, समाज और इतिहास

आपने पिछले अध्याय से जाना कि मुद्रण संस्कृति का उदय कैसे हुआ और किस तरह संचार के नए रूपों ने लोगों के एक-दूसरे के बारे में सोचने और एक-दूसरे से जुड़ने के तरीक़े को बदल दिया। आपने यह भी देखा कि मुद्रण संस्कृति ने साहित्य के नए रूपों को संभव बनाया। इस अध्याय में हम साहित्य के एक ऐसे ही नए रूप–उपन्यास–के बारे में पढ़ेंगे क्योंकि इसका आधुनिक सोच के ढर्रे से निहायत नज़दीकी रिश्ता रहा है। पहले हम पश्चिम में उपन्यास के इतिहास को और फिर भारत के कुछ इलाक़ों में इसके विकास का अध्ययन करेंगे। आप देखेंगे कि बहुत सारे आपसी फ़र्क़ के बावजूद, दुनिया के विभिन्न हिस्सों में उपन्यासों में काफ़ी अहम समानताएँ थीं।

© NCERT not to be republished

1 उपन्यास का उदय

उपन्यास साहित्य की एक आधुनिक विधा है। इसकी पैदाइश छापेख़ाने के मशीनी आविष्कार से हुई।

छपी किताब के बगैर उपन्यास की कल्पना हम नहीं कर सकते। आप जानते हैं कि प्राचीन काल में पांडुलिपियाँ हस्तलिखित होती थीं (सातवाँ अध्याय)। इससे प्रसार चंद लोगों तक सीमित था। लेकिन मशीन से छपने के बाद उपन्यासों को बहुत बड़ा पाठक वर्ग मिल गया और जल्द ही इसे ज़बरदस्त लोकप्रियता मिली। इस समय तक लंदन जैसे शहर बड़ी तेज़ी से फैल रहे थे और छपाई तथा संचार के अन्य साधनों के आने से छोटे शहरों से भी उनका संपर्क आसान हो गया था। अपने बिखरे हुए और विविध पाठक-वर्ग के बीच उपन्यासों ने कुछ साझी रुचियाँ क़ायम कीं। ज्यों-ज्यों पाठक कहानी में घुसते गए और काल्पनिक किरदारों से उनका रिश्ता बनता गया, त्यों-त्यों प्रेम और विवाह तथा स्त्री-पुरुष-संबंध आदि के बारे में वे अलग तरह से सोचने लगे।

उपन्यास ने पहले-पहल जड़ें इंग्लैंड और फ़्रांस में जमाईं। हालाँकि उपन्यास सत्रहवीं सदी से ही लिखे जाने लगे थे, लेकिन उनका असली विकास अठारहवीं सदी में ही हुआ। इनके पाठकों में इंग्लैंड और फ़्रांस के पारंपरिक **भद्र समाज** के अलावा दुकानदार व मुंशी वर्ग के लोग भी शामिल हो गए।

पाठक वर्ग और किताबों के बाज़ार के बढ़ने से लेखकों की आय भी बढ़ी। कुलीन वर्ग के संरक्षण से आज़ाद होकर अब वे खुले दिल से अलग-अलग शैलियों में तरह-तरह के प्रयोग करने लगे। अठारहवीं सदी के पहले हिस्से में लिख रहे उपन्यासकार हेनरी फ़ील्डिंग ने दावा किया कि उन्होंने 'अपने लिए एक अलग साम्राज्य खुद बनाया है' जहाँ उन्हीं के बनाए क़ानून चलते हैं। वॉल्टर स्कॉट ने स्कॉट लोकगीतों को याद और जमा करके स्कॉट वंशावली व उनकी लड़ाइयों के इतिहास पर लिखे अपने उपन्यासों में उनका उपयोग किया। दूसरी तरफ़ ख़तूती या **पत्रात्मक उपन्यासों** में निजी पत्रों को आधार बनाया गया। अठारहवीं सदी में लिखे गए सैमुएल रिचर्डसन के उपन्यास *पामेला* में पूरी कहानी प्रेमियों के आपसी ख़तों के ज़रिए कही गई है। पाठकों को नायिका के मन की बात, उसके अंतर्द्वंद्वों का पता नायिका की चिट्ठियों से ही चलता है।

1.1 प्रकाशन बाज़ार

समाज के ग़रीब तबक़े काफ़ी अरसे तक प्रकाशन के बाज़ार से बाहर रहे। शुरू-शुरू में उपन्यास सस्ते तो थे नहीं। हेनरी फ़ील्डिंग का *टॉम जोन्स* (1749) छः खंडों में प्रकाशित हुआ और हर खंड की क़ीमत तीन शिलिंग थीं, जो कि एक औसत मज़दूर के हफ़्ते-भर की कमाई होती थी।

नए शब्द

भद्र समाज : जो लोग ऊँचे ख़ानदान में पैदाइश और ऊँची समाजिक हैसियत का दावा करते थे । उनका मानना था कि सही व्यवहार के मानक वही तय करते हैं।

पत्रात्मक उपन्यास : पत्रों की शृंखला के रूप में लिखा हुआ।

© NCERT not to be republished

लेकिन जल्द ही 1740 में किराये पर चलनेवाले पुस्तकालयों की स्थापना के बाद लोगों के लिए किताबें सुलभ हो गईं। तकनीकी सुधार से भी छपाई के ख़र्चे में कमी आई और मार्केटिंग के नए तरीक़ों से किताबों की बिक्री बढ़ी। फ़्रांस में प्रकाशकों को लगा कि उपन्यासों को घंटे के हिसाब से किराये पर उठाने से ज़्यादा लाभ होता है। याद रहे कि उपन्यास बृहद स्तर पर उत्पादित और बेची जाने वाली सर्वप्रथम वस्तुओं में से एक था। इसकी लोकप्रियता के कई कारण थे। उपन्यासों में रची जा रही दुनिया विश्वसनीय और दिलचस्प थी, और सच लगती थी। उपन्यास पढ़ते हुए पाठक किसी और दुनिया में चला जाता था और संसार को किताब के किरदार की नज़र से देखने लगता था। इन्हें अकेले-अकेले भी पढ़ा जा सकता था, और दोस्तों-रिश्तेदारों के साथ मिल-बैठ-बोलकर भी इस पर चर्चा की जा सकती थी। देहाती इलाक़ों में लोग अकसर इकट्ठा होकर उपन्यासों को बड़े ग़ौर से किसी एक को पढ़ते हुए सुनते देखे जा सकते थे। कहा जाता है कि इंग्लैंड के स्लाउ नामक स्थान पर लोग यह जानकर बड़े खुश हुए कि रिचर्डसन के उपन्यास की नायिका, पामेला, उन्हीं के गाँव में ब्याही गई थी। वे उत्साह में आकर चर्च की ओर भागे और वहाँ जाकर गिरजाघर की घंटियाँ बजाने लगे।

चार्ल्स डिकेन्स के उपन्यास *पिकविक पेपर्स* का 1836 में एक पत्रिका में **धारावाहिक** रूप में छपना एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। सचित्र और सस्ती होने की वजह से पत्रिकाओं का अपना आकर्षण था। धारावाहिक मुद्रण के चलते पाठकों को रहस्य का मज़ा मिलने लगा, वे आपस में चरित्रों पर चर्चा करने लगे, और हफ़्ता-दर-हफ़्ता उनकी कहानियों के साथ जीने लगे। ठीक उसी तरह जैसे आज के टीवी सीरियलों के साथ होता है।

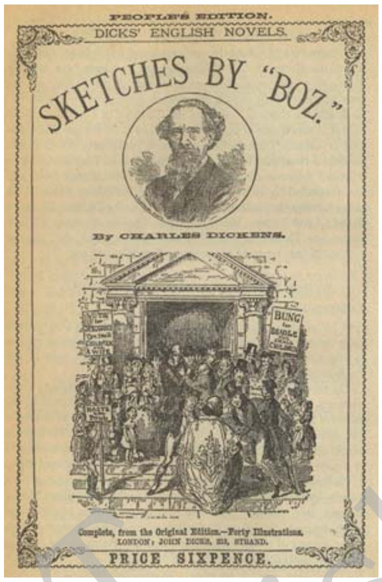

चित्र 1 – 'बोज़' के स्केचेज़ का आवरण चित्र।
चार्ल्स द्वितीय का पहला प्रकाशन 'बोज़' बाई स्केचेज़ के नाम से प्रकाशित हुआ था (1836) और यह पत्रकारी निबंधों का संग्रह था।

नए शब्द

धारावाहिक : ऐसी पद्धति जिसमें कहानी को किस्तों में छापा जाता है। हर किस्त पत्रिका या अख़बार के अगले अंक में छपती है।

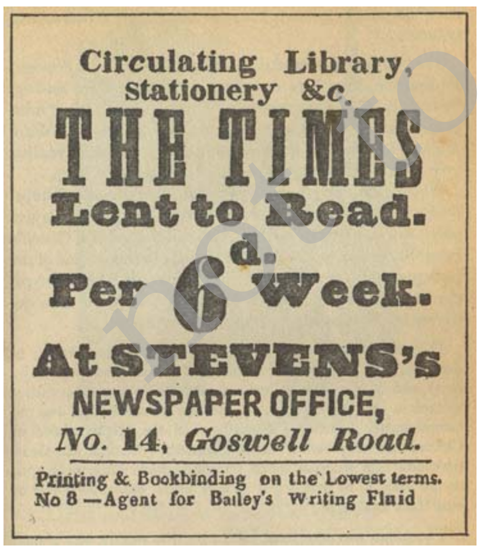

चित्र 2- पुस्तकालय नोटिस।
पुस्तकालयों का काफ़ी प्रचार किया जाता था।

"THE STORY OF OUR LIVES FROM YEAR TO YEAR."—SHAKESPEARE.

ALL THE YEAR ROUND.
A WEEKLY JOURNAL.
CONDUCTED BY CHARLES DICKENS.
WITH WHICH IS INCORPORATED HOUSEHOLD WORDS.

SATURDAY, DECEMBER 1, 1860.

GREAT EXPECTATIONS.
BY CHARLES DICKENS.
CHAPTER I.

चित्र 3 – ऑल दि ईयर राउंड का आवरण पृष्ठ।
चार्ल्स डिकेन्स द्वारा संपादित पत्रिका ऑल दि ईयर राउंड का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू यह था कि उसमें डिकेन्स के उपन्यास धारावाहिक रूप में छपते थे।

© NCERT not to be republished

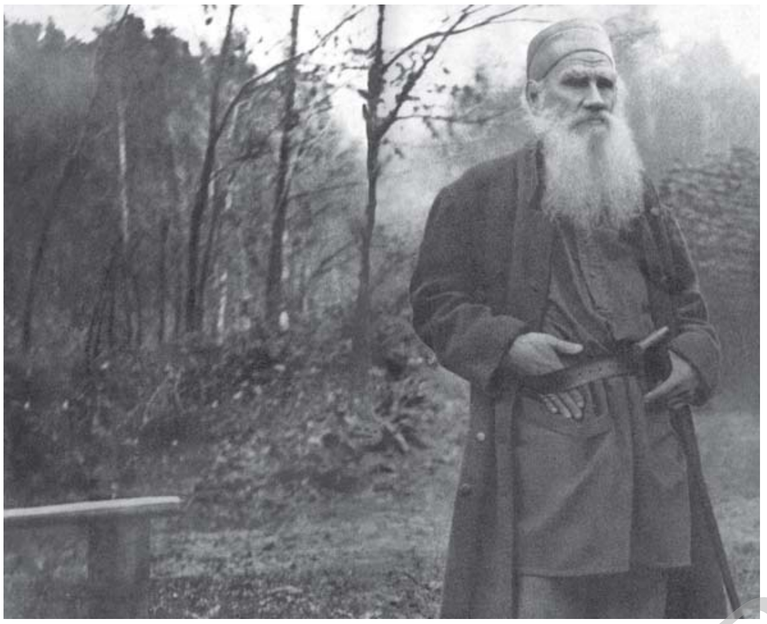

चित्र 4 – लियो तोल्स्तोय (1828-1910)।
तोल्स्तोय प्रसिद्ध रूसी उपन्यासकार थे जिन्होंने ग्रामीण जीवन और समुदाय पर काफ़ी कुछ लिखा।

1.2 उपन्यासों की दुनिया

इससे पहले आनेवाली तमाम लिखित कृतियों की तुलना में उपन्यास आम लोगों की ज़िंदगी के ज़्यादा क़रीब हैं। इनमें राज्यों-साम्राज्यों की तक़दीर बदलने वाली महान हस्तियों की ही चर्चा नहीं होती बल्कि इनमें आम इनसानों की रोज़ाना की ज़िंदगी का चित्रण भी मिलता है।

उन्नीसवीं सदी में यूरोप ने औद्योगिक युग में प्रवेश किया। फ़ैक्ट्रियाँ आईं, व्यवसाय में मुनाफ़े बढ़े, अर्थव्यवस्था फैली। लेकिन साथ ही मज़दूरों की समस्याएँ भी बढ़ीं, शहर अधिक काम और कम मज़दूरी पर खटते श्रमिकों से भर गए। ग़रीब बेरोज़गार काम की तलाश में सड़कों की ख़ाक छानने लगे और वर्कहाउस या रैनबसेरों में पनाह लेने लगे। उद्योगों की प्रगति के साथ-साथ मुनाफ़ाखोरों को सही व मज़दूरों को कमतर इनसान मानने की प्रवृत्ति चल पड़ी। इस घटनाक्रम की कड़ी निंदा करते हुए चार्ल्स डिकेन्स जैसे उपन्यासकारों ने लोगों के जीवन व चरित्र पर औद्योगीकरण के दुष्प्रभावों के बारे में लिखा। उनके उपन्यास *हार्ड टाइम्स* (1854) में वर्णित कोकटाउन एक उदास काल्पनिक औद्योगिक शहर है, जहाँ मशीनों की भरमार है, धुआँ उगलती चिमनियाँ हैं, प्रदूषण से स्याह पड़ी नदियाँ हैं, और मकान सब एक-से। मज़दूरों को यहाँ 'हाथ' की संज्ञा से जाना जाता है, और मशीन चलाने के अलावा उनकी कोई और अस्मिता नहीं। डिकेन्स ने न केवल लाभ के लोभ की आलोचना की बल्कि उन विचारों को भी आड़े हाथों लिया जो इनसानों को महज़ उत्पादन का औज़ार मानते हैं।

अपने दूसरे उपन्यासों में भी डिकेन्स ने औद्योगीकरण के दौर में शहरी जीवन की दुर्दशा का चित्रण किया। उनका *ओलिवर ट्विस्ट* (1838) एक ऐसे

चर्चा करें

निम्नलिखित प्रकार के उपन्यासों का क्या मतलब है?

- पत्रात्मक उपन्यास
- धारावाहिक उपन्यास

दोनों क़िस्मों के बारे में प्रसिद्ध एक-एक लेखक का नाम ज़रूर बताएँ।

चित्र 5 – चार्ल्स डिकेन्स 1812-1870

© NCERT not to be republished

अनाथ की कहानी कहता है, जिसे छोटे-मोटे अपराधियों और भिखारियों की दुनिया में रहना पड़ा। एक निर्मम वर्कहाउस या कामघर (चित्र 6) में पलने-बढ़ने के बाद ओलिवर को अंतत: एक अमीर ने गोद ले लिया और वह सुख से रहने लगा। पर ग़रीबों के जीवन से जुड़ा हर उपन्यास पाठक को सुखांत का आनंद दे यह ज़रूरी नहीं था। एक युवा खनिक की ज़िंदगी पर लिखित एमिली ज़ोला का *जर्मिनल* (1885) खदान मज़दूरों के शोचनीय हालात का जायज़ा लेता है। इसका अंत दुखद है: नायक जिस हड़ताल की अगुवाई कर रहा है, वह असफल रहती है और उसके साथ मज़दूर उसके ख़िलाफ़ खड़े हो जाते हैं, आशा की कोई किरण नहीं दिखती।

चित्र 6 – भूखा ओलिवर खाने के लिए और माँगता है जबकि कारख़ाने में काम करने वाले बाक़ी बच्चे डर से उसे देखने लगते हैं, ओलिवर ट्विस्ट में बना चित्र।

चित्र 7 – एमिली जोला, चित्रकार एडवर्ड माने, 1868
माने द्वारा बनाए गए चित्र में फ़्रांसीसी लेखक अपनी मेज़ के सामने बैठे हैं। इस चित्र से किताबों के साथ उनके गहरे रिश्ते की झलक मिलती है।

1.3 समुदाय व समाज

उपन्यासों के ज़्यादातर पाठक शहरों में रहते थे। उपन्यासों ने उनमें ग्रामीण समुदायों की नियति के साथ जुड़ने का भाव पैदा किया। मिसाल के तौर पर उन्नीसवीं सदी के उपन्यासकार टॉमस हार्डी ने इंग्लैंड के तेज़ी से ग़ायब होते देहाती समुदायों के बारे में लिखा। यह वही समय था, जब बड़े किसानों ने

© NCERT not to be republished

अपनी ज़मीनों को बाड़ाबंद कर लिया था, और मशीनों पर मज़दूर लगाकर उन्होंने बाज़ार के लिए उत्पादन शुरू कर दिया था। हमें इस बदलाव का अहसास हार्डी के *मेयर ऑफ़ कैस्टरब्रिज* (1886) को पढ़कर होता है। यह कहानी माइकल हेंचर्ड की है, जो पहले अनाज का व्यापारी होता है, और फिर कैस्टरब्रिज नामक देहाती शहर का मेयर बनने में सफल हो जाता है। वह स्वतंत्र विचारों का व्यक्ति है, अपने ही तरीक़े से व्यापार करता है। पर अपने कर्मचारियों के साथ उसका रवैया अनिश्चित–कभी बेहद दयालु, तो कभी एकदम निर्दयी–होता था। लिहाज़ा वह अपने प्रबंधक व प्रतिद्वंद्वी, डॉनल्ड फ़ारफ़्रे के सामने टिक नहीं पाता। फ़ारफ़्रे की प्रबंधन तकनीक सक्षम थी और लोग मानते थे कि वह हर किसी के साथ एक-जैसा और शालीन बर्ताव करता था। हम देख सकते हैं कि हार्डी इस कहानी में उस ग़ायब होते वक़्त का अफ़सोस करते हैं, जिसमें एक तरह का अपनापन था–हालाँकि उन्हें पुरानी व्यवस्था की ख़ामियों और नयी ख़ूबियों का भी अहसास है।

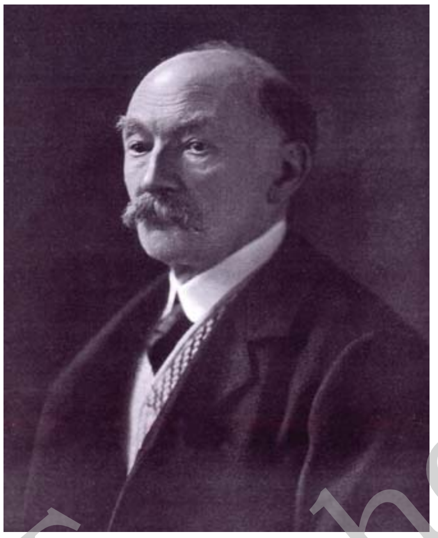

चित्र 8 – टॉमस हार्डी (1840-1928)

उपन्यास आम लोगों, जनसाधारण, की भाषा का इस्तेमाल करता है। लोगों की अलग-अलग बोलियों से निकटता बनाकर उपन्यास एक राष्ट्र के विविध समुदायों की साझा दुनिया रचता है। इस तरह उपन्यास भाषा की अलग-अलग शैलियों से भी सामग्री लेते हैं। किसी एक ही उपन्यास में एक साथ शास्त्रीय व सड़कछाप भाषा को उपन्यास की अपनी **जनभाषा** के साथ मिलाकर पेश किया जा सकता है। राष्ट्र की ही तरह उपन्यास भी कई संस्कृतियों को एक साथ इकट्ठा करता है।

1.4 नयी महिला

उपन्यास से संबंधित सबसे भली बात तो यह हुई कि महिलाएँ उससे जुड़ीं। अठारहवीं सदी में मध्यवर्ग और संपन्न हुए। नतीजे में महिलाओं को उपन्यास पढ़ने और लिखने का अवकाश मिल सका। अतः उपन्यासों में महिला जगत को, उसकी भावनाओं, उसके तजुर्बों, मसलों और उसकी पहचान से जुड़े मुद्दों को समझा-सराहा जाने लगा।

कई सारे उपन्यास घरेलू ज़िंदगी पर केंद्रित थे। इनमें महिलाओं को अधिकार के साथ बोलने का अवसर मिला। अपने अनुभवों को आधार बनाकर उन्होंने पारिवारिक जीवन की कहानियाँ रचते हुए अपनी सार्वजनिक पहचान बनाई।

जेन ऑस्टिन के उपन्यासों में हमें उन्नीसवीं सदी के ब्रिटेन के ग्रामीण कुलीन समाज की झाँकी मिलती है। हमें ऐसे समाज के बारे में सोचने की प्रेरणा मिलती है जहाँ महिलाओं को धनी या जायदाद वाले वर खोजकर 'अच्छी'

नए शब्द

जनभाषा (Vernacular) : औपचारिक, साहित्यिक शैली के बजाय सामान्य बोलचाल की भाषा।

© NCERT not to be republished

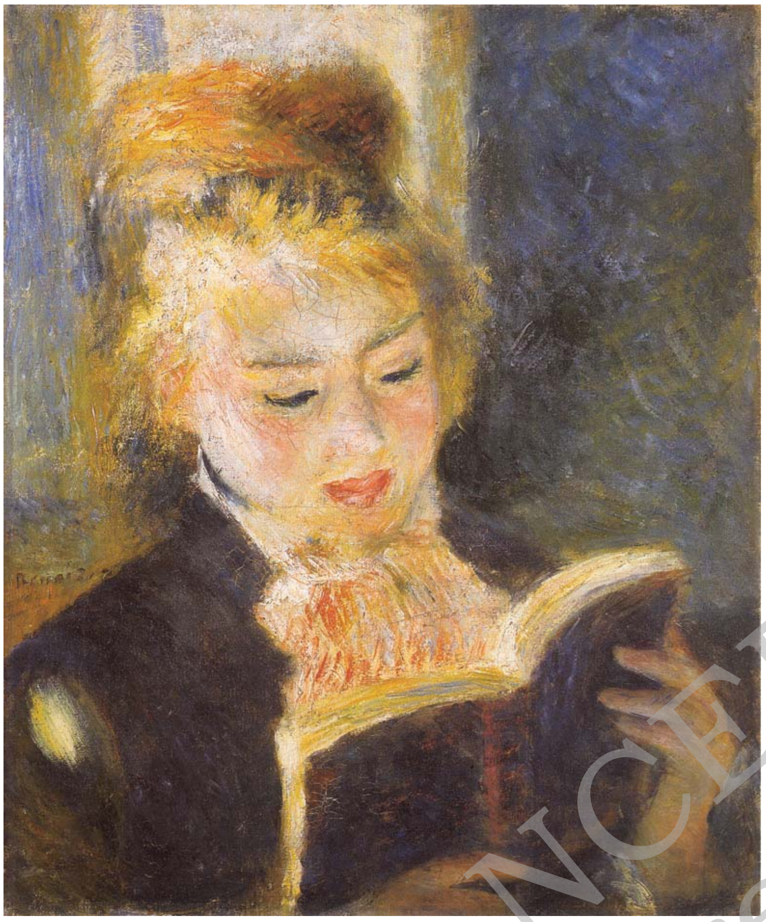

चित्र 9 – पढ़ती हुई लड़की, ज्याँ रेनोआ (1841-1919) के द्वारा बनाया गया चित्र।
उन्नीसवीं सदी तक आते-आते यूरोपीय चित्रों में खामोशी से बैठी अपने अकेले कमरे में पढ़ती औरतों की तसवीरें काफ़ी दिखाई देने लगी हैं।

चित्र 10 – एक लेखिका का घर, जॉर्ज क्रूकशांक द्वारा बनाया चित्र।
जब औरतों ने उपन्यास लिखना शुरू कर दिया तो बहुत सारे लोगों को लगा कि वे अब पत्नी व माँ की परंपरागत भूमिकाओं को नहीं सँभालेंगी और घर अस्त-व्यस्त हो जाएँगे।

© NCERT not to be republished

शादियाँ करने के लिए उत्साहित किया जाता था। जेन ऑस्टिन के उपन्यास *प्राइड एंड प्रेज्युडिस* की पहली पंक्ति देखें: 'यह एक सर्वस्वीकृत सत्य है कि कोई अकेला आदमी अगर मालदार है तो उसे एक अदद बीवी की तलाश होगी।' इस बयान से हम ऑस्टिन के समाज को समझ सकते हैं, कि उनके उपन्यासों की औरतें क्यों हमेशा अच्छी शादी और पैसे की फ़िराक़ में रहती हैं।

लेकिन महिला उपन्यासकारों ने सिर्फ़ गृहस्थिन चरित्रों को ही लोकप्रिय नहीं बनाया। हमें उनकी कृतियों में अकसर ऐसी औरतें मिलती हैं जो सामाजिक मान्यताओं को मानने के पहले उनसे लड़ती हैं। इन कहानियों से पाठिकाओं को विद्रोह करने की प्रेरणा अवश्य मिली होगी। शारलॉट ब्रॉण्ट की 1847 में प्रकाशित *जेन आयर* में युवती जेन को आज़ाद-ख़याल और दृढ़ व्यक्तित्व वाला दिखाया गया है। यद्यपि उस दौर की महिलाओं को खामोश और शालीन रहने का संस्कार दिया जाता था, लेकिन जेन दस साल की उम्र में ही बड़ों के पाखंड का मुँहतोड़ जवाब देकर चौंका देती है। उससे हमेशा बुरा सुलूक करने वाली अपनी आंट से वह कहती है: 'लोग आपको नेक औरत समझते हैं, लेकिन हक़ीक़त में आप बुरी हैं... आप शातिर हैं। इस ज़िंदगी में तो मैं आपको आंट नहीं कहने वाली।'

चित्र 11 – जेन ऑस्टिन (1775-1817)।

चित्र 12 – विवाह अनुबंध, विलियम होगार्थ द्वारा बनाया चित्र (1697-1764)।
जैसा कि आप देख सकते हैं चित्र के अगले हिस्से में बैठे दो आदमी शादी के करारनामे पर दस्तख़त कर रहे हैं जबकि औरत किनारे बैठी रहती है।

© NCERT not to be republished

1.5 युवाओं के लिए उपन्यास

किशोरों के लिए उपन्यासों में एक नए तरह का आदर्श पुरुष पेश किया गया जो ताक़तवर, दृढ़, स्वतंत्र और साहसी था। ऐसे ज़्यादातर उपन्यासों की कथाभूमि यूरोप से दूर कहीं ऐसी जगह पर होती थी, और घटनाएँ जोश और साहस के कारनामों से भरी होती थीं। उपनिवेश की स्थापना करनेवालों को नायक का सम्मान दिया जाता था, क्योंकि वे अनजान वातावरण में देसी लोगों से जूझ रहे थे, देसी समाज के अनुरूप खुद को ढालते हुए उसे भी बदल रहे थे। वे भू-भागों में उपनिवेश बनाकर उनमें राष्ट्र विकसित कर रहे थे। इस विधा की किताबों में आर.एल. स्टीवेंसन की *ट्रेज़र आइलैंड* (1883) और रडयार्ड किपलिंग की *जंगल बुक* (1894) बहुत मशहूर हुईं।

बॉक्स 1

उपन्यासकार औरतें

जॉर्ज इलियट (1819-1880) का असली नाम मेरी एन इवान्स था। जॉर्ज इलियट उनका लेखकीय नाम था। वह प्रसिद्ध उपन्यासकार थीं और उनका मानना था कि उपन्यासों से औरतों को खुद को स्वच्छंदतापूर्वक व्यक्त करने का अवसर मिलता है। हर औरत साहित्य लिखने में सक्षम होती है।

'कथा लेखन साहित्य की एक ऐसी शाखा है जिसमें अपने ढंग से औरतें मर्दों की पूरी तरह बराबरी कर सकती है। कोई शैक्षणिक बंदिश औरतों को कथा लेखन की सामग्री से वंचित नहीं कर सकती और कला की ऐसी कोई प्रजाति नहीं है जो कड़ी आवश्यकताओं से इतनी आज़ाद हो।'

जॉर्ज इलियट, 'सिली नॉवल्स बाई लेडी नॉवलिस्ट', 1856

ब्रितानी साम्राज्य के बोलबाले के ज़माने में जी.ए. हेंटी के ऐतिहासिक साहसिक उपन्यास भी बेहद लोकप्रिय थे। उनसे अजनबी इलाक़ों पर विजय हासिल करने का उत्साह और हौसले का भाव पैदा होता होगा। इनकी पृष्ठभूमि मेक्सिको, अलेक्ज़ांड्रिया, सायबेरिया जैसे अनेक देशों की होती थी। इनकी कहानियों में अकसर युवा लड़कों को ऐतिहासिक घटनाओं का गवाह बनाया जाता था, उन्हें किसी न किसी सैनिक कार्रवाई में डालकर 'अंग्रेज़ी' हिम्मत का पाठ पढ़ाया जाता था।

किशोरियों के लिए लिखी प्रेम कहानियाँ भी इसी ज़माने में, ख़ासतौर पर अमेरिका में, लोकप्रिय हुईं। हेलेन हंट जैक्सन कृत *रमोना* (1884) और सूज़न कूलिज के छद्म नाम से लिखने वाली सारा चौंसी वूल्ज़ी की सीरीज़ *ह्वाट केटी डिड* (1872) ने काफ़ी नाम कमाया।

1.6 उपनिवेशवाद के बाद

इस तरह यूरोप में उपन्यास का उदय उस समय हुआ जब वह बाक़ी विश्व पर औपनिवेशिक क़ब्ज़ा जमा रहा था। उपनिवेशवाद में शुरुआती उपन्यासों

चित्र 13 – शारलॉट ब्रॉण्ट (1816-1855)।

बॉक्स 2

जी.ए. हेंटी (1832-1902)।

अंडर ड्रेक्स फ़्लैग (1883) में दो ऐलिज़ाबेथियाई युवा रोमांचकारी मौत के नज़दीक पहुँच जाते हैं लेकिन इसके बावजूद इस घमंड को नहीं छोड़ते कि वे अंग्रेज़ हैं।

'देखो नेड, क़िस्मत ने हमें उम्मीद से ज़्यादा साथ दिया है। हो सकता है हम उसी दिन मर जाते जब हम यहाँ पहुँचे थे लेकिन हमने तो मैदानों में शिकार करते छह महीने मज़े से बिता दिए। अब मरना ही है तो हम अंग्रेज़ों की तरह और ईसाइयों की तरह बर्ताव करते हुए मरेंगे।'

© NCERT not to be republished

का योगदान यही था कि इन्होंने अपने पाठकों में उपनिवेशकों के महान समुदाय का हिस्सा होने का अहसास भरा। डैनियल डेफ़ो कृत *रॉबिंसन क्रूसो* (1719) का नायक साहसिक यात्री होने के साथ-साथ दास-व्यापारी है। एक द्वीप पर जहाज़ी दुर्घटना के बाद पड़ा हुआ वह ग़ैर-गोरे लोगों को बराबर का इनसान नहीं बल्कि अपने से हीनतर जीव मानता है। एक 'देसी' को मुक्त कराकर उसे वह अपना गुलाम बना लेता है। वह उससे उसका नाम पूछना भी ज़रूरी नहीं समझता, बस अपनी तरफ़ से उसे फ्राइडे कहता है। पर उस समय क्रूसो का व्यवहार अमान्य सा असामान्य नहीं समझा गया, क्योंकि उस दौर में ज़्यादातर लेखक उपनिवेशवाद को एक सहज और कुदरती परिघटना मानते थे। जिन्हें उपनिवेशीकृत या ग़ुलाम बनाया गया था, उन लोगों को आदिमानुस, बर्बर और इनसान से कमतर माना जाता था और यह भी कि उपनिवेशवाद उनको सभ्य, पूर्ण इनसान बनाने का ज़रूरी औज़ार था। काफ़ी बाद, बीसवीं सदी में आकर ही जोसफ कॉनरैड (1857-1924) जैसे लेखकों ने अपने उपन्यासों में औपनिवेशिक गुलामी के स्याह पक्ष को उजागर किया।

जिन्हें ग़ुलाम बनाया गया था, उनका विश्वास था कि उपन्यास ने उन्हें अपनी अस्मिता, अपने मसलों और राष्ट्रीय सरोकारों को समझने का मौक़ा दिया। आइए देखें कि उपन्यास भारत में कैसे और कब लोकप्रिय हुआ और समाज के लिए इसका क्या महत्त्व रहा?

© NCERT not to be republished

2 उपन्यास भारत आया

भारत में गद्य कथाएँ पहले भी लिखी जा रही थीं। मिसाल के तौर पर बाणभट्ट ने सातवीं सदी में संस्कृत में *कादम्बरी* लिखी थी। *पंचतंत्र* एक और मशहूर उदाहरण है। इसके अलावा फ़ारसी और उर्दू में भी साहस, वीरता और चतुराई के क़िस्सों की लंबी परंपरा थी, जिसे दास्तान कहते थे।

लेकिन ये कृतियाँ हम आज जिसे उपन्यास कहते हैं, उनसे भिन्न थीं। भारत में आधुनिक उपन्यास का विकास उन्नीसवीं सदी में पश्चिमी उपन्यास से भारतीयों के परिचय के बाद हुआ। भारतीय भाषाओं, छपाई, और पाठक-वर्ग के विकास से इसमें काफ़ी मदद मिली। यहाँ के आरंभिक उपन्यास बंगाली और मराठी में लिखे गए। मराठी का पहला उपन्यास बाबा पद्मणजी का *यमुना पर्यटन* (1857) था, जिसमें विधवाओं की दुर्दशा को आधार बनाकर सीधी-सादी कहानी बुनी गई थी। इसके बाद लक्ष्मण मोरेश्वर हाल्बे कृत *मुक्तमाला* (1861) आया। यह कोई यथार्थवादी कृति नहीं थी, बल्कि इसके ज़रिए एक 'रूमानी' कहानी के कलेवर में नैतिक सीख देने की कोशिश की गई थी। उन्नीसवीं सदी के अग्रणी उपन्यासकारों ने किसी न किसी उद्देश्य को लेकर उपन्यास रचे। उपनिवेशवादी शासकों को उस समय की भारतीय संस्कृति कमतर नज़र आती थी। वहीं भारतीय उपन्यासकारों ने देश में आधुनिक साहित्य का विकास करने के उद्देश्य से लिखा–ऐसा साहित्य जो लोगों में राष्ट्रीयता की भावना और उपनिवेशी शासकों से बराबरी का अहसास जगा सके।

विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में उपन्यासों के अनुवाद से उपन्यास की लोकप्रियता तो बढ़ी ही, इसका कई और इलाक़ों में विकास भी हुआ।

बॉक्स 3

सारे मराठी उपन्यास यथार्थवादी नहीं थे। नारो सदाशिव ऋस्बद ने अपने मराठी उपन्यास *मंजूघोष* (1868) में बेहद सौंदर्यात्मक शैली का इस्तेमाल किया था। इस उपन्यास में हैरतअंगेज़ घटनाओं की भरमार थी। ऋस्बद ने जानबूझ कर यह शैली चुनी थी।

उनका कहना था–

'शादी के प्रति हमारे रवैये तथा कई अन्य कारणों से हिंदुओं की ज़िंदगी में न तो दिलचस्प नज़रिए मिलते हैं और न दिलचस्प मूल्य...। अगर हम रोज़मर्रा के तजुर्बों के बारे में लिखें तो उनमें कुछ मज़ेदार नहीं रहेगा, इसलिए अगर हमें मनोरंजक किताब लिखनी है तो हमें बेजोड़ चीज़ों को लेना ही पड़ेगा।'

2.1 दक्षिण भारत में उपन्यास

दक्षिण भारतीय भाषाओं में भी उपन्यास औपनिवेशिक काल के दौरान ही आने लगे थे। कई शुरुआती उपन्यास तो अंग्रेज़ी उपन्यासों के अनुवाद के रूप में छपे। मिसाल के तौर पर मालाबार के उप-न्यायाधीश, ओ. चंदू मेनन ने बेंजामिन डिज़रायली के उपन्यास *हेनरीएटा टेम्पल* का मलयालम में तर्जुमा (अनुवाद) करने की कोशिश की। लेकिन उन्हें जल्दी ही महसूस हुआ कि केरल के उनके पाठ अंग्रेज़ी उपन्यासों के चरित्रों के रहन-सहन, उनके कपड़ों, उनकी बोलचाल, उनके रस्मो-रिवाज से वाकिफ़ नहीं थे। उन्हें अंग्रेज़ी उपन्यासों का ठेठ अनुवाद निहायत उबाऊ लगता। इसलिए उन्होंने अनुवाद का विचार छोड़ दिया और 'अंग्रेज़ी उपन्यासों की तर्ज़ पर' एक मलयालम कहानी लिखी। *इंदुलेखा* (1889) नामक यह मज़ेदार उपन्यास मलयालम का पहला आधुनिक उपन्यास माना गया।

चित्र 14 – चन्दू मेनन (1847-1899)।

आंध्र प्रदेश का मामला भी लगभग ऐसा ही रहा। काण्डुकुरी वीरेशलिंगम (1848-1919) ने ओलिवर गोल्डस्मिथ के *विकार ऑफ़ बेकफ़ील्ड* का

© NCERT not to be republished

तेलुगू अनुवाद शुरू किया पर उन्होंने भी वैसे ही कारणों से यह योजना त्याग दी और फिर 1878 में *राजशेखर चरितमू* लिखा।

2.2 हिंदी उपन्यास

उत्तर में आधुनिक हिंदी साहित्य के पुरोधा, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, ने अपनी मंडली के कवियों व लेखकों को दूसरी भाषाओं में पुनर्रचना और अनुवाद करने को उत्साहित किया। उनकी प्रेरणा से कई सारे उपन्यास अंग्रेज़ी या बंगाली से हिंदी में या तो अनूदित हुए या रूपांतरित, लेकिन हिंदी का पहला उपन्यास लिखने का श्रेय दिल्ली के श्रीनिवास दास को जाता है।

चित्र 15 – पिकविक एब्रॉड का एक चित्र।
जी.डब्ल्यू.एम. रेनॉल्ड्स द्वारा लिखी पुस्तक पिकविक एब्रॉड से लिया गया एक चित्र।
रेनाल्ड, एफ. मारयोन क्रॉफ़ोर्ड और मेरी कोरेली जैसे उन्नीसवीं सदी के छोटे अंग्रेज़ उपन्यासकार औपनिवेशिक भारत में बहुत मशहूर थे।
उनके उपन्यास ऐतिहासिक प्रेम कथा, रोमांचकारी क़िस्सों और सनसनी पर आधारित होते थे। वे यहाँ आसानी से उपलब्ध थे उनका कई भारतीय भाषाओं में अनुवाद और 'रूपांतरण' किया गया था। भारत में रेनाल्ड का पिकविक एब्रॉड *(1839) चार्ल्स डिकेन्स के मूल उपन्यास* पिकविक पेपर्स *(1837) के मुक़ाबले ज्यादा प्रसिद्ध था।*

परीक्षा-गुरु (1882) नामक इस उपन्यास में खुशहाल परिवारों के युवाओं को बुरी संग-सोहबत के नैतिक खतरों से आगाह किया गया।

परीक्षा-गुरु से नव-निर्मित मध्यवर्ग की अंदरूनी व बाहरी दुनिया का पता चलता है। उपन्यास के चरित्रों को औपनिवेशिक शासन से क़दम मिलाने में कैसी मुश्किलें आती हैं और अपनी सांस्कृतिक अस्मिता को लेकर वे क्या सोचते हैं, यह इस उपन्यास का कथ्य है। औपनिवेशिक आधुनिकता की दुनिया उनको एक साथ भयानक और आकर्षक मालूम पड़ती है। उपन्यास पाठक को जीने के 'सही तरीक़े' बताता है, और हर 'विवेकवान' इनसान से यह उम्मीद करता है कि वे समाज-चतुर और व्यावहारिक बनें पर साथ ही अपनी संस्कृति और परंपरा में जमे रहकर इज़्ज़त और गरिमा की ज़िंदगी जिएँ।

not to be republished
©NCERT

उपन्यास के क़िरदार अपने कर्म से दो अलग संसारों के बीच की दूरी पाटने की कोशिश करते दिखाई देते हैं: वे नयी कृषि तकनीक अपनाते हैं, व्यापार-कर्म को आधुनिक बनाते हैं, भारतीय भाषा के प्रयोग बदलते हैं ताकि वह पाश्चात्य विज्ञान और भारतीय बुद्धि दोनों को अभिव्यक्ति करने में सक्षम हो सकें। युवाओं से अख़बार पढ़ने की 'स्वस्थ आदत' डालने की अपील की जाती है। लेकिन उपन्यास में इस बात पर ज़ोर है कि यह सब मध्यवर्गी गृहस्थी के पारंपरिक मूल्यों पर समझौता किए बगैर हो। अपनी तमाम अच्छी मंशा के बावजूद *परीक्षा-गुरु* बहुत ज़्यादा पाठक नहीं जुटा पाया, शायद इसलिए कि इसकी शैली कुछ अधिक उपदेशात्मक थी।

हिंदी उपन्यास का पाठक-वर्ग देवकी नंदन खत्री के लेखन से पैदा हुआ। माना जाता है कि उनकी बेस्ट-सेलर *चंद्रकान्ता संतति* – जो फ़ंतासी के तत्वों से बुना हुआ रूमानी उपन्यास था – ने उस समय के शिक्षित तबक़ों में हिंदी भाषा और नागरी लिपि को लोकप्रिय बनाने में अहम भूमिका निभाई। हालाँकि इसे मात्र 'पढ़ने के मज़े' के लिए लिखा गया था, फिर भी इससे इसके पाठक-वर्ग की चाहत और उनके भय के बारे में भी दिलचस्प सुराग मिलता है।

प्रेमचंद के लेखन के साथ हिंदी उपन्यास में उत्कृष्टता आई। उर्दू से लिखना शुरू कर वे बाद में हिंदी में लिखने लगे और दोनों ही भाषाओं में उनका प्रभाव ज़बरदस्त रहा। उन्होंने पारंपरिक क़िस्सागोई से अपनी शैली के लिए प्रेरणा ली। कई आलोचक मानते हैं कि 1916 में प्रकाशित उनके उपन्यास *सेवासदन* ने हिंदी उपन्यास को फ़ंतासी, उपदेश और सरल मनोरंजन के दायरे से उठाकर आम लोगों की ज़िंदगी और सामाजिक सरोकारों पर विचारनेवाली विधा बना दिया। इस उपन्यास में मूलत: महिलाओं की दुरावस्था पर ध्यान दिया गया है, पर बाल-विवाह और दहेज जैसे सामाजिक मसले भी उठाए गए हैं। साथ ही इससे हमें पता चलता है कि उच्च वर्ग ने औपनिवेशिक शासकों से स्वशासन के जो भी थोड़े-बहुत मौक़े मिले, उनका उन्होंने किस तरह इस्तेमाल किया।

2.3 बंगाल में उपन्यास

उन्नीसवीं सदी के बंगाल का उपन्यास दो संसारों में जीता था, कुछ तो भूतकाल में रहते थे, उनके किरदार, घटनाएँ और प्रेम कहानियाँ ऐतिहासिक होती थीं। जबकि एक और क़िस्म के उपन्यास समसामयिक महिलाओं की घरेलू परिस्थितियों पर केंद्रित थे। महिला घरेलू उपन्यास आमतौर पर सामाजिक समस्याओं और स्त्री-पुरुष संबंधों के इर्द-गिर्द घूमते थे।

कलकत्ता का पुराना व्यापारी कुलीन वर्ग संगीत और नृत्य सभाओं और काव्य-प्रतियोगिताओं को संरक्षण देता। इसके बरक्स नए भद्रलोक को उपन्यास की दुनिया ज़्यादा रास आई, उन्हें एकांत में पढ़ना ज़्यादा भाया, कभी-कभार समूह में भी उपन्यास पढ़े जाते थे। बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय अपने घर में जात्रा का आयोजन करते थे और उसमें पूरा परिवार शरीक होता था। लेकिन उनके अपने कमरे में साहित्यिक मित्र इकट्ठा होकर साहित्यिक

चर्चा करें

शुरुआती हिंदी उपन्यास की दो अहम विशेषताओं के बारे में लिखें।

बॉक्स 4

असम में उपन्यास

असम में सबसे शुरुआती उपन्यास मिशनरियों ने लिखे थे। उनमें से दो का बंगाली में अनुवाद किया गया था। इन उपन्यासों में *फूलमणी और करुणा* नामक उपन्यास भी शामिल थे।

1888 में असमिया विद्यार्थियों ने कोलकाता में असमिया भाषार उन्नतिसाधन नामक संस्था का गठन किया और *जोनकी* के नाम से एक पत्रिका निकालनी शुरू कर दी। इस पत्रिका के ज़रिए नए लेखकों को उपन्यास की विधा को विकसित करने का मौक़ा मिला। रजनीकांता बारदोलेई ने असम में *मनोमती* (1900) के नाम से पहला बड़ा ऐतिहासिक उपन्यास लिखा। यह उपन्यास बर्मी अतिक्रमण के बारे में था जिसकी कहानियाँ लेखक ने संभवत: उन पुराने सिपाहियों से ही सुनी होगी जो 1819 के अभियान में हिस्सा ले चुके थे। यह एक दूसरे के दुश्मन दो परिवारों से संबंध रखने वाले दो प्रेमियों की कथा है जो युद्ध के कारण बिछड़ जाते हैं और बाद में दुबारा मिलते हैं।

© NCERT not to be republished

कृतियों को पढ़कर उनका मूल्यांकन करते थे, उनपर बहस-मुबाहिसा करते थे। जब बंकिम ने अपने पहले उपन्यास, *दुर्गेशनंदिनी* (1865) का ऐसे ही एक समूह में पाठ किया तो सभा ने दाँतों तले उँगली दबा ली कि बंगाली गद्य ने कितनी जल्दी ऐसी उत्कृष्टता हासिल कर ली थी!

कथानक में रहस्य-रोमांच के उतार-चढ़ाव की पटुता तो थी ही, उसकी भाषा भी निराली थी। इसकी गद्य-शैली अपने आप में आनंद का स्रोत बन गई। शुरू-शुरू में बंगाली उपन्यासों में शहरी जीवन की तर्ज़ पर बोलचाल की शैली का इस्तेमाल हुआ। साथ ही, महिलाओं में प्रचलित बोली मेयेली का भी उपयोग किया गया। यह शैली जल्द ही बदल गई – बंकिम की भाषा संस्कृतनिष्ठ थी पर उसमें बोलियों का भी पुट था।

उपन्यास बहुत शीघ्र बंगाल में खूब लोकप्रिय हो गया। बीसवीं सदी तक आते-आते सरल भाषा में कहानी कहने की उनकी क़ाबिलियत ने शरद चंद्र चट्टोपाध्याय (1876-1938) को बंगाल, या शायद पूरे भारत का, सबसे लोकप्रिय उपन्यासकार बना दिया।

चित्र 16 – बंकिमचंद्र चट्टोपाधयाय (1838-1894)।
किताब पर बंकिम के हाथ दर्शाते हैं कि लेखन ही उनकी सामाजिक हैसियत और रसूख का आधार थी।

चित्र 17 – मंदिर और बैठक।
दाएँ सिरे पर मंदिर बना है जहाँ परिवार के लोग तथा अन्य लोग इकट्ठा होते थे जबकि बाएँ सिरे पर वह बैठक है जिसमें बंकिम अपने कुछ दोस्तों के साथ नयी साहित्यिक कृतियों पर चर्चा किया करते थे। ध्यान दें, परंपरागत और आधुनिक-दोनों क़िस्म की जगहें एक दूसरे से सटी दिखाई दे रही हैं। यह औपनिवेशिक भारत में अधिकांश बुद्धिजीवियों की खंडित जीवनशैली की ओर संकेत है।

बॉक्स 5

उड़िया उपन्यास

1877-78 में नाटककार रामशंकर राय ने *सौदामिनी* के नाम से पहले उड़िया उपन्यास का धारावाहिक प्रकाशन शुरू किया लेकिन वे इसे पूरा नहीं कर पाए। 30 साल के भीतर उड़ीसा में फकीर मोहन सेनापति (1843-1918) के रूप में एक बड़ा उपन्यासकार पैदा किया। उनके एक उपन्यास का नाम *छ: माणो आठौ गुंठौ* (1902) था जिसका शाब्दिक अर्थ है – छह एकड़ और बत्तीस गट्ठे ज़मीन। इस उपन्यास के साथ एक नए क़िस्म के उपन्यास की धारा शुरू हुई जो ज़मीन और उस पर हक़ के सवाल से जुड़ी थी। इस उपन्यास में रामचंद्र मंगराज की कहानी है जो एक ज़मींदार के मैनेजर की नौकरी करता है। यह मैनेजर अपने आलसी और पियक्कड़ मालिक को ठगता है और नि:सन्तान बुनकर पति-पत्नी भगिया और सारिया की उपजाऊ ज़मीन को हथियाने की जुगत सोचता रहता है। मंगराज बुनकर दंपति को बेवकूफ बनाकर उन्हें क़र्ज़े में दबा लेता है जिससे ज़मीन उसकी हो जाए। यह उपन्यास मील का पत्थर साबित हुआ और इसने साबित कर दिया कि उपन्यास के ज़रिए ग्रामीण मुद्दों को भी गहरी सोच का अहम हिस्सा बनाया जा सकता है। यह उपन्यास लिखकर फकीर मोहन ने बंगाल तथा अन्य स्थानों पर बहुत सारे लेखकों के लिए रास्ता खोल दिया था।

© NCERT not to be republished

3 औपनिवेशिक ज़माने में उपन्यास

अगर हम भारत के विभिन्न इलाक़ों में उपन्यास के विकास को ग़ौर से देखें तो हमें उनमें कई सारी क्षेत्रीय विशेषताएँ दिखाई देंगी, पर उनमें एक तरह की समानता और बार-बार दिखने वाला पैटर्न भी नज़र आएगा। लेखकों को उपन्यास लिखने की प्रेरणा कहाँ से मिलती थी? उन्हें पढ़ता कौन था? पढ़ने की संस्कृति किस तरह विकसित हुई? औपनिवेशिक परिवेश में सामाजिक परिवर्तन से उपन्यास किस तरह रू-ब-रू हुआ? उपन्यासों ने अपने पाठकों के लिए कौन-से नए जगत खोले? इन सवालों का जवाब देने की कोशिश करते हुए हम मूल रूप से तीन अलग इलाक़ों के इन तीन लेखकों के रचना जगत को देखेंगे: चंदू मेनन, बंकिम चंद्र चट्टोपाध्याय और प्रेमचंद।

3.1 उपन्यास के इस्तेमाल

औपनिवेशिक सरकार को उपन्यासों में देसी जीवन व रीति-रिवाज से जुड़ी जानकारी का बहुमूल्य स्रोत नज़र आया। नाना प्रकार के समुदायों व जातियों वाले भारतीय समाज पर शासन करने के लिए इस तरह की जानकारी उपयोगी थी। भारतीय घरों के अंदर क्या होता है, भला उन्हें कैसे पता चल पाता? पर भारतीय भाषाओं के इन नए उपन्यासों में गृहस्थी का विपुल वर्णन था। उन्हें पढ़कर लोगों के पहनावे-ओढ़ावे, पूजा-पाठ, उनके विश्वास और आचार आदि के बारे में सहज पता चल सकता था। इनमें से कुछ किताबों का तो अंग्रेज़ी अनुवाद भी हुआ, जिसको अंजाम देने वाले अकसर या तो ब्रितानी प्रशासक थे, या ईसाई मिशनरी।

हिंदुस्तानियों ने उपन्यासों का इस्तेमाल समाज में जो उनकी नज़र में बुराइयाँ थीं, उनकी आलोचना करने और उनके इलाज सुझाने के लिए किया। वीरेशलिंगम जैसे लेखकों ने उपन्यास का उपयोग मूलत: अपने विचारों को ज़्यादा से ज़्यादा लोगों तक पहुँचाने के लिए किया।

उपन्यासों की मदद से भूत के साथ रिश्ता भी क़ायम किया गया। कई सारे उपन्यास पुराने ज़माने की शौर्य और साज़िश की रोमांचक कहानियाँ थे। प्राचीन काल का महिमा-गायन करके इन कृतियों ने अपने पाठकों में राष्ट्रीय गौरव की भावना का संचार किया।

पर यह भी सही है कोई भी व्यक्ति उपन्यासों को पढ़ सकता था, बशर्ते उसे उसकी भाषा आती हो। इस तरह भाषा के साझा आधार पर एक अलग क़िस्म की सामूहिकता भी पैदा हुई।

आपने ग़ौर किया होगा कि एक ही इलाक़े के लोग अकसर एक ही भाषा को अलग-अलग लहज़े में बोलते हैं-कभी वे एक ही चीज़ के लिए दूसरे शब्द इस्तेमाल करते हैं, तो कभी उसी शब्द का अलग ढंग से उच्चारण किया जाता है। उपन्यास के आगमन के बाद इस तरह की विविधताएँ छपाई की

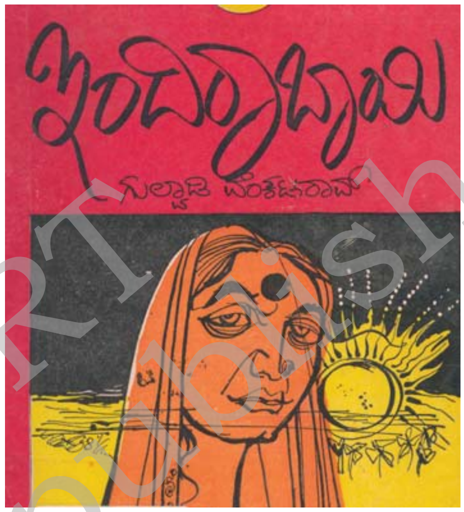

चित्र 18 – उपन्यास इंदिराबाई का आवरण पृष्ठ।

उन्नीसवीं सदी के अंत में लिखा गया उपन्यास इंदिराबाई आज भी लोकप्रिय है और उसका नियमित रूप से पुनर्मुद्रण हो रहा है। यह हाल ही के एक संस्करण का आवरण पृष्ठ है।

बॉक्स 6

सुधार का संदेश

बहुत सारे शुरुआती उपन्यासों में सुधारवादी संदेश साफ़ दिखाई देते हैं। उदाहरण के लिए 1899 में गुलावड़ी वेंकटराव द्वारा लिखे गए कन्नड़ उपन्यास-*इंदिराबाई* में नायिका को बहुत कम उम्र में एक बूढ़े से ब्याह दिया जाता है। कुछ ही समय में उसके पति की मृत्यु हो जाती है और उसे विधवा का जीवन जीने को विवश किया जाता है। अपने परिवार और समाज के विरोध के बावजूद इंदिराबाई अपनी तालीम जारी रखती है। आख़िरकार वह दुबारा शादी करती है। इस बार वह एक अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे आदमी से शादी करती है। उस समय कर्नाटक के सामाजिक सुधारकों के सामने महिला शिक्षा, विधवाओं की दुर्दशा और लड़कियों के कम उम्र में विवाह से पैदा होने वाली समस्याओं पर काफ़ी मंथन चल रहा था।

© NCERT not to be republished

बॉक्स 7

तमिल भाषा के सबसे लोकप्रिय ऐतिहासिक उपन्यासकार आर. कृष्णमूर्ति रहे हैं जो 'कल्कि ' के नाम से लिखते थे। उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़चढ़ कर हिस्सा लिया और वे प्रसिद्ध तमिल पत्रिकाओं–*आनंदविकटन* और *कल्कि* के संपादक थे। सरल भाषा में लिखे और बहादुरी, रोमांच, रहस्य से भरे उपन्यासों ने तमिल भाषियों की एक पूरी पीढ़ी को अपने मोहपाश में बाँध लिया।

चित्र 19 – कल्कि द्वारा लिखित और कल्कि नामक पत्रिका में धारावाहिक प्रकाशित हुए उपन्यास* पोन्नीयिन सेलवन *का एक पन्ना, 1951

दुनिया में पहली बार दाख़िल हुई। उपन्यास का कौन सा पात्र किस तरह बोलता है, यह उसके इलाक़े, वर्ग या जाति का परिचायक बन गया। इस प्रकार उपन्यास के ज़रिए लोग यह जान पाए कि उनके इलाक़े के ही लोग उनकी भाषा किस तरह अलग ढंग से बोलते हैं।

3.2 आधुनिक होने की समस्याएँ

काल्पनिक कहानियाँ होने के बावजूद उपन्यास अकसर अपने पाठकों से उनके असली संसार की बातें करते। पर यह भी तय है उनमें दुनिया की असलियत वैसी ही नहीं दिखाई जाती थी, जैसी वह वाक़ई है। कभी-कभी उनमें दुनिया कैसी होनी चाहिए, उसका आदर्श पेश किया जाता था। सामाजिक उपन्यासकार बहुधा आदर्श नायक-नायिकाएँ पेश करते थे, जिन्हें उनके पाठक सराह सकें, जिनका वे अनुसरण कर सकें। ये आदर्श गुण भला कैसे परिभाषित होते थे? औपनिवेशिक काल के कई उपन्यासों में आदर्श व्यक्ति गुलामी के जीवन की सबसे अहम दुविधा का सफलतापूर्वक निर्वाह करता है: परंपरा को त्यागे बिना आधुनिक कैसे बनें? पश्चिम से आने वाले विचारों को अपनी पहचान खोए बगैर कैसे स्वीकारें?

चंदू मेनन की *इंदुलेखा* के रूप में जिस पात्र का सृजन किया, उस अपूर्व सुंदरी में कई अद्‌भुत बौद्धिक और कलात्मक प्रतिभाएँ थीं, और वह संस्कृत व अंग्रेज़ी पढ़ी हुई थी। नायक माधवन भी आदर्श रंग में रँगा गया था। वह मद्रास विश्वविद्यालय से पैदा हुए नए अंग्रेज़ी-शिक्षा-प्राप्त नायर वर्ग का

© NCERT not to be republished

सदस्य था। साथ ही वह 'उच्च कोटि का संस्कृतज्ञ' भी था। पश्चिमी कपड़े तो पहनता था, पर साथ ही, नायर रीति के मुताबिक़ लंबी चुटिया भी रखता था।

ज़्यादातर उपन्यास के नायक व नायिकाएँ आधुनिक दुनिया की पैदाइश थे। इस तरह वे भारत के पुराने ज़माने के मिथकीय आदर्श चरित्रों से अलग थे। औपनिवेशिक युग में अंग्रेज़ी-शिक्षित वर्ग को पाश्चात्य रहन-सहन और विचार आकर्षित करते थे। पर उन्हें इसका भी अंदेशा था कि पश्चिमी मूल्यों को थोक-भाव से अपना लेने पर कहीं उनकी अपनी पारंपरिक जीवन-शैली न नष्ट हो जाए। इंदुलेखा और माधवन जैसे क़िरदारों ने पाठकों को दिखाया कि कैसे भारतीय और विदेशी जीवन-शैली में आदर्श तालमेल बिठाया जा सकता है।

3.3 पाठ का आनंद

बाक़ी दुनिया की तरह उपन्यास भारत में भी मध्यवर्ग के मनोरंजन का लोकप्रिय माध्यम बन गया। किताबों के चलन में आने के बाद लोगों के हाथ मन-बहलाव के नए तरीक़े लग गए। सचित्र किताबें, दूसरी भाषाओं से अनुवाद, लोकप्रिय गाने, जिन्हें कभी-कभी समसामयिक घटनाओं के आधार पर रचा जाता था, ये सब मनोरंजन के नए साधन थे। प्रिंट की इस नयी संस्कृति में उपन्यास जल्द ही महा-लोकप्रिय हो गए।

मिसाल के तौर पर तमिल में बीसवीं सदी के शुरुआती दशकों में उपन्यासों की बाढ़-सी आ गई। पाठकों माँग पूरी करने के लिए जासूसी और रहस्यात्मक उपन्यास को तो कई दफ़े छापना पड़ता था-और कुछेक तो 22 बार पुनर्मुद्रित हुए।

उपन्यास की मदद से लोगों ने मौन रहकर पढ़ना सीखा। हम चुपचाप पढ़ने के ऐसे आदी हो चुके हैं कि हमारे लिए यह सोचना भी मुश्किल हो जाता है कि पहले के ज़माने में यह आम चलन नहीं था।

उन्नीसवीं सदी के आखिर तक बल्कि शायद बीसवीं सदी की शुरुआत तक लिखित पाठ बोल-बोल कर पढ़ा जाता था ताकि इकट्ठा लोग सुन सकें। कभी-कभी उपन्यास भी ऐसे ही पढ़े जाते रहे पर आमतौर पर उपन्यास अकेले में और खामोश रहकर ही पढ़े जाते। घर में अकेला बैठा या रेलगाड़ी में सफ़र करता व्यक्ति उपन्यास पढ़ने का आनंद ले सकता था। किसी भीड़-भरे कमरे में भी पाठक उपन्यास की दुनिया में डूबकर सब-कुछ भूल सकता था। इस तरह उपन्यास पढ़ना एक दिवास्वप्न देखने जैसा था।

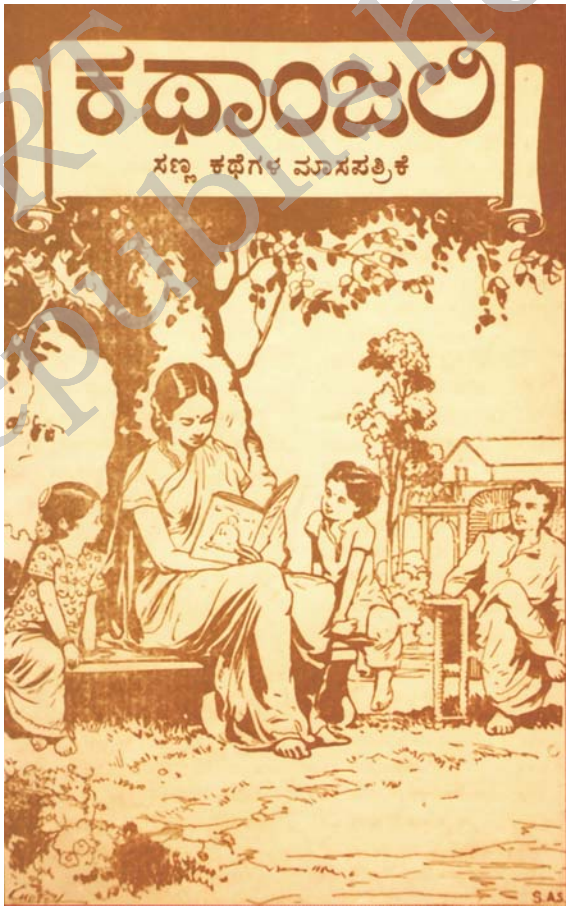

चित्र 20 – कन्नड़ पत्रिका कथांजलि का आवरण पृष्ठ।
कथांजलि का प्रकाशन 1929 में शुरू हुआ और उसमें नियमित रूप से लघुकथाएँ छपती थीं। इस तसवीर में एक माँ अपने बच्चों को कहानी पढ़कर सुना रही है।

© NCERT not to be republished

4 महिलाएँ और उपन्यास

कुछ लोगों को यह चिंता सताने लगी कि उपन्यास का लोगों के ज़ेहन पर क्या प्रभाव पड़ेगा–क्योंकि ज़्यादातर पाठक तो हक़ीक़त की दुनिया से ऐसे काल्पनिक जगत में चले जाते थे, जहाँ कुछ भी हो सकता था। उनमें से कुछ ने पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखकर लोगों से अपील की कि वे उपन्यासों के नैतिक दुष्प्रभाव से बचें। यह निर्देश ख़ासतौर पर महिलाओं और बच्चों को लक्षित था : माना जाता था कि उन्हें बड़ी आसानी से बहकाया जा सकता है।

कुछ माँ-बाप उपन्यासों को अपने बच्चों की पहुँच से बाहर, मसलन छज्जे पर छिपाकर, रखते थे। युवा अकसर पढ़ने का काम चोरी-छिपे करते थे। लेकिन यह उत्साह सिर्फ़ युवाओं तक सीमित नहीं था। बड़ी-बूढ़ी महिलाएँ जो आमतौर पर पढ़ी-लिखी नहीं थीं, भी लोकप्रिय तमिल उपन्यासों को अपने पोते-पोतियों से बड़ी तल्लीनता से सुनती थीं, जो कि दादी-नानी की कहानियों की कहावत का एकदम उलट क़िस्सा हुआ।

लेकिन महिलाएँ पुरुषों द्वारा लिखी गई कहानियों की पाठिका-मात्र बनकर नहीं रहीं। कुछ भाषाओं में उनकी सबसे शुरुआती रचनाएँ कविताएँ, लेख या आत्मकथात्मक बयान थीं। बीसवीं सदी के आरंभिक दशकों में दक्षिण भारत की लेखिकाओं ने उपन्यास और कहानियाँ भी लिखनी शुरू कर दीं। महिलाओं के बीच उपन्यास की लोकप्रियता का एक कारण यह भी था कि इससे नारीत्व की एक नयी परिकल्पना उभरती थी। कई उपन्यासों की मूल कथानक–प्रेम-कहानियों–में ऐसी महिलाएँ आती थीं, जो अपने साथी या रिश्ते को स्वयं चुन सकती थीं, या उन्हें अस्वीकार सकती थीं। यानी इनमें ऐसी महिलाओं का चित्रण था जो अपनी ज़िंदगी की मालकिन खुद थीं। कुछ लेखिकाओं ने ऐसी नारियों के बारे में लिखा जिन्होंने औरतों के साथ-साथ मर्दों की दुनिया भी बदल डाली।

रोकैया हुसैन (1880-1932) समाज सुधारक थीं, जिन्होंने विधवा होने के बाद कलकत्ता में एक बालिका विद्यालय की स्थापना की। उन्होंने अंग्रेज़ी में *सुल्ताना'ज़ ड्रीम, 1905* (सुल्ताना का स्वप्न) नामक एक **व्यंग्यात्मक** फ़ंतासी लिखी, जिसमें उस उलट-पुलट भरी दुनिया की बात की गई जहाँ महिलाओं ने पुरुषों की जगह ले ली है। उनके उपन्यास *पद्मराग* ने अपनी क़िस्मत का फ़ैसला खुद करके महिलाओं की दशा सुधारने का आह्वान किया।

हैरत की बात नहीं कि कई सारे मर्द महिलाओं द्वारा उपन्यास लिखने या पढ़ने के चलन को शक की नज़र से देखते थे। शक करने वालों में हर समुदाय

नए शब्द

व्यंग्य : लेखन, चित्रकारी, रेखांकन आदि के माध्यम से निरूपण का एक ऐसा ढंग जिसमें हास्यपरक और चतुर ढंग से समाज की आलोचना की जाती है।

चित्र 21 – पढ़ती हुई एक औरत, सत्येन्द्र नाथ बिशी द्वारा बनाया काष्ठ चित्र।

इस काष्ठ चित्र में दर्शाया गया है कि किस तरह औरतें भी पढ़ने का मज़ा लेने लगी थीं। उन्नीसवीं सदी के अंत में पढ़ती हुई औरतों की छवियाँ भारत की लोकप्रिय पत्रिकाओं में अकसर दिखाई देने लगी थीं।

स्रोत-क

औरतों को उपन्यास क्यों नहीं पढ़ना चाहिए

1927 में प्रकाशित एक तमिल लेख एक अंश–

'प्रिय बच्चियो, इन उपन्यासों को पढ़ना मत, छूना भी नहीं। तुम्हारी ज़िंदगी तबाह हो जाएगी। तुम्हें बीमारियाँ और व्याधियाँ घेर लेंगी। ईश्वर ने तुम्हें क्यों पैदा किया है– इतनी छोटी-सी उम्र में भटकने के लिए? बीमार पड़ने के लिए? अपने भाइयों, रिश्तेदारों और आसपास वालों की घृणा का पात्र बनने के लिए? नहीं। नहीं। तुम्हें माँ बनना है, तुम्हें अच्छी ज़िंदगी चाहिए; यही तुम्हारा दैवी उद्देश्य है। तुम्हें इस उदात्त उद्देश्य को पूरा करने के लिए जन्म लिया है, क्या तुम्हें इन... उपन्यासों के पीछे पागल होकर अपनी ज़िंदगी बर्बाद कर देनी चाहिए?'

थिरु.वी.का. द्वारा लिखित निबंध; ए.आर. वेंकटाचलपति द्वारा अनूदित।

स्रोत

© NCERT not to be republished

के लोग थे। ईसाई धर्मप्रचारक और बंगाली के शायद पहले उपन्यास *करुणा ओ फूलमनीर बिबरण (1852)* की लेखिका हाना मूलेन्स अपने पाठकों को बताती हैं कि वे गुप्त रूप से लिखा करती थीं। बीसवीं सदी में शैलबाला घोष जया इसलिए लिख पाईं क्योंकि उन्हें अपने पति का संरक्षण प्राप्त था। जैसा कि हमें दक्षिण भारत के दृष्टांत से पता है, यहाँ भी लड़कियों और महिलाओं को पढ़ने से निरुत्साहित किया जाता था।

4.1 जाति प्रथा, 'निम्न जातियाँ' और अल्पसंख्यक

आपको पता है कि *इंदुलेखा* एक प्रेम कहानी थी। लेकिन यह 'उच्च जाति' की एक वैवाहिक समस्या से भी रू-ब-रू थी जिस पर इसके लिखे जाने के वक़्त वाद-विवाद चल रहा था। नम्बूदरी ब्राह्मण उस समय केरल के बड़े ज़मींदार थे और नायरों का एक बड़ा तबक़ा उनके रैयत/लगानदार थे। अपने आप धन अर्जित कर अमीर बने नायरों की नयी पीढ़ी नायर महिलाओं के साथ नम्बूदरी ब्राह्मणों के रिश्ते पर आपत्ति जताने लगी। वे चाहते थे कि शादी और संपत्ति को लेकर नए क़ानून बनाए जाएँ।

इस विवाद के आलोक में *इंदुलेखा* को पढ़ना काफ़ी दिलचस्प होगा। जो इंदुलेखा से शादी के लिए आनेवाले सूरी नम्बूदरी नामक बेवकूफ़ ज़मींदार को इस उपन्यास के व्यंग्य का शिकार बनाया गया है। बुद्धिमान नायिका उसको अस्वीकार कर देती है, और पढ़े-लिखे, सुंदर, नायर माधवन को चुनती है, फिर युवा दंपति मद्रास आकर रहते हैं, जहाँ माधवन सिविल सेवा में नौकरी करता है। सूरी नम्बूदरी को शादी की तड़प थी, लिहाज़ा वह उसी परिवार की एक ग़रीब संबंधी से शादी रचा कर चला जाता है, यह सोचते हुए कि उसने इंदुलेखा से ही शादी की है। चंदू मेनन चाहते हैं कि उनके पाठक नायक-नायिका द्वारा अपनाए गए नए मूल्यों को सराहें और सूरी नम्बूदरी के अनैतिक हथकंडों की निंदा करें।

इंदिराबाई और *इंदुलेखा* जैसे उपन्यास उच्च जाति के उपन्यासकारों द्वारा, मूल रूप से वैसे ही चरित्रों को लेकर लिखे गए थे। लेकिन सारे उपन्यास ऐसे ही नहीं थे।

उत्तरी केरल की 'निम्न' जाति के लेखक पोथेरी कुंजाम्बु ने 1892 में *सरस्वतीविजयम* नामक उपन्यास लिखा, जिसमें जाति-दमन की कड़ी निंदा की गई। इस उपन्यास का 'अछूत' नायक ब्राह्मण ज़मींदार के ज़ुल्म से बचने के लिए शहर भाग जाता है। वह ईसाई धर्म अपना लेता है, पढ़-लिखकर जज बनकर, स्थानीय कचहरी में वापस आता है। इसी बीच गाँव वाले यह सोचकर कि ज़मींदार ने उसकी हत्या कर दी है, अदालत में मुक़दमा कर देते हैं। मामले की सुनवाई के आख़िर में जज अपनी असली पहचान खोलता है और नम्बूदरी को अपने किए पर पश्चाताप होता है, वह सुधर जाता है। इस तरह *सरस्वतीविजयम* निम्न जाति के लोगों की तरक़्क़ी के लिए शिक्षा के महत्त्व को रेखांकित करता है।

बॉक्स 8

किताबों के साथ औरतें

'आजकल हम काली किनारी वाली साड़ियाँ पहने और हाथों में मोटी-मोटी किताबें लिए औरतों को अपने घर में टहलते देखते हैं। उनके हाथों में अकसर किताबें देखकर उनके भाई या पति भयभीत हो जाते हैं-कहीं वे किसी शब्द का मतलब न पूछ लें।'

साधारणी, 1880

चित्र 22 – मालाबार ब्यूटी, रवि वर्मा का चित्र।
चन्दू मेनन का मानना था कि उपन्यास भी भारतीय चित्रकला के क्षेत्र में सामने आ रहे नए रुझानों की तरह हैं।
राजा रवि वर्मा इस काल के सबसे प्रमुख तैल चित्रकारों में थे (1848-1906)। चन्दू मेनन ने अपनी नायिकाओं का जिस तरह चित्रण किया है उस पर रवि वर्मा के चित्रों का असर भी हो सकता है।

© NCERT not to be republished

बंगाल में भी 1920 के आसपास एक नयी क़िस्म के उपन्यास का आना हुआ जिनमें किसानों और निम्न जातियों से जुड़े मसले उठाए गए। अद्वैत मल्ला बर्मन (1914–51) ने *तीताश एकटी नदीर नाम* (1956) के रूप में तीताश नदी में मछली मारकर जीनेवाले मल्लाहों के जीवन पर एक महाकाव्यात्मक उपन्यास लिखा। इसमें मल्लाहों की तीन पीढ़ियों की, उनकी सतत त्रासदियों की और अपनी सुहागरात को ही एक-दूसरे से बिछुड़ गए माँ-बाप के बेटे अनंत की कहानियाँ हैं। अनंत अपनी बिरादरी को छोड़कर शहर आकर पढ़ाई करता है। उपन्यास में मल्लाहों के सामुदायिक जीवन का, उनके होली और काली पूजा उत्सवों का, नौका-दौड़, *भटियाली* गानों, किसानों से उनके रिश्ते, दोस्ती-दुश्मनी और उच्च जातियों के साथ साथ उनकी वैमनस्यता का विशद वर्णन है। पर धीरे-धीरे शहर से आते सांस्कृतिक प्रभावों के दबाव में समुदाय में दरार पड़ जाती है, मल्लाह आपस में लड़ने लगते हैं। समुदाय और नदी के बीच बड़ा नज़दीकी आपसी संबंध है। उनका अंत भी साथ-साथ होता है–ज्यों-ज्यों नदी सूखती है, समुदाय मरता जाता है। हालाँकि बर्मन से पहले के उपन्यासकारों ने भी 'निम्न' जाति के क़िरदार रचे थे पर *तीताश* इसलिए ख़ास है चूँकि लेखक खुद 'निम्न' जाति के मल्लाह समुदाय के थे।

वक़्त के साथ उपन्यास-माध्यम में ऐसे समुदायों को स्थान मिलने लगा जो साहित्यिक परिदृश्य पर अब तक नज़र नहीं आए थे। मिसाल के तौर पर वैकोम मुहम्मद बशीर (1908-94) मलयालम में मशहूर होनेवाले शुरुआती मुस्लिम उपन्यासकारों में से एक थे।

बशीर की औपचारिक शिक्षा नहीं के बराबर हुई थी। उनकी ज़्यादातर कृतियाँ उनके अपने अनुभवों, न कि पढ़ी हुई किताबों, पर आधारित थीं। पाँच साल की उम्र में स्कूल की पढ़ाई करते समय उन्होंने नमक सत्याग्रह में भाग लेने के लिए घर छोड़ दिया। बाद में सालों तक वह भारत के विभिन्न हिस्सों में घूमते रहे, फिर अरब गए, जहाज़ पर काम किया, सूफ़ी और हिंदू संन्यासियों की सोहबत की, पहलवानी भी सीखी।

बशीर की उपन्यासिकाएँ और कहानियाँ आम बोलचाल की भाषा में लिखी गई थीं। बशीर के उपन्यास मुस्लिम घरों की रोज़ाना की ज़िंदगी को चुटीले अंदाज़ में बयान करते थे। अपने लेखन में उन्होंने ग़रीब, पागलपन, और बंदी जीवन पर ऐसे कथानक रचे जो मलयालम में उस समय आम नहीं थे।

चित्र 23 – किताबें सँभाले बशीर।
लेखक के तौर पर अपने शुरुआती सालों में बशीर को अपनी किताबों के सहारे रोज़ी-रोटी चलाने में भारी परेशानी पेश आई। वे खुद अपनी किताबें घरों और दुकानों में जाकर बेचते थे। बशीर ने अपनी कुछ कहानियों में उन दिनों का भी ज़िक्र किया है जब वे अपनी ही किताबों को घूम-घूमकर बेचते थे।

© NCERT not to be republished

5 राष्ट्र और उसका इतिहास

औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा लिखे गए इतिहास में हिंदुस्तानियों को आमतौर पर कमज़ोर, आपस में विभाजित और अंग्रेज़ों पर निर्भर बताया जाता था। इस इतिहास से भारत के नए प्रशासकों और बौद्धिकों को असंतोष होना लाज़िमी था। न ही उनका विश्वास सुरों-असुरों के हैरतअंगेज़ और अंधविश्वासी कारनामों व किरदारों से पटी पारंपरिक पौराणिक कहानियों पर जम सकता था। ऐसे मानस को भूत के एक नए दृष्टिकोण की दरकार थी, वे यह जताना चाहते थे कि भारतीय स्वतंत्र चेतना वाले थे, और इतिहास में भी आज़ाद-ख़याल रहे थे। उन्हें उपन्यास ने एक अच्छा समाधान मुहैया कराया। इसमें राष्ट्र भूतकाल में कल्पित किया जा सकता था, और इस तरह अतीत में ऐतिहासिक चरित्र और स्थान, घटनाएँ और तारीख़ हो सकती थीं।

चित्र 24 – चेम्मीन फ़िल्म का दृश्य।
बहुत सारे उपन्यासों पर फ़िल्में बनी। तकषी शिवशंकर पिल्लै (1912-99) द्वारा लिखित उपन्यास चेम्मीन *(झींगा, 1956) केरल के मछुआरा समुदाय की पृष्ठभूमि पर आधारित है और उसके पात्र मलयालम की विभिन्न शैलियों में बात करते हैं। रामू करयात के निर्देशन में* चेम्मीन *फ़िल्म 1965 में बनाई गई।*

बंगाल में कई सारे उपन्यास मराठों व राजपूतों को लेकर लिखे गए। इनसे अखिल-भारतीयता का अहसास पैदा हुआ। उनमें कल्पित राष्ट्र रूमानी साहस, वीरता, और त्याग से ओत-प्रोत था। ये ऐसे गुण थे जिन्हें उन्नीसवीं सदी के दफ़्तरों और सड़कों पर पाना मुश्किल था। इस तरह उपन्यास में गुलाम जनता ने अपनी चाहत को साकार करने का ज़रिया ढूँढ़ा। भूदेब मुखोपाध्याय (1827-94) कृत *अँगुरिया बिनिमॉय* (1857) बंगाल में लिखा जाने वाला पहला ऐतिहासिक उपन्यास था। इसके नायक शिवाजी धूर्त और कुटिल औरंगज़ेब से कई बार लोहा लेते हैं। मान सिंह शिवाजी को शांति-समझौता के लिए आग्रह करते हैं। लेकिन यह समझने के बाद कि औरंगज़ेब उन्हें नज़रबंद करना चाहता है, शिवाजी भाग निकलते हैं और फिर से जंग के मैदान में नज़र आते हैं। उनके साहस और जीवन का प्रेरणास्रोत यह विश्वास है कि वे हिंदुओं की आज़ादी के लिए लड़ रहे राष्ट्रवादी हैं।

चित्र 25 – कन्नड़ फ़िल्म **चोमाना दुदी** ***का एक दृश्य (चोमा का ढोल, निर्देशक बी.वी. कारंत, 1975)।***
यह फ़िल्म 1930 में प्रसिद्ध कन्नड़ उपन्यासकार शिवराम कारंत (1902-1997) द्वारा लिखे गए इसी नाम के उपन्यास पर आधारित है।

उपन्यास में कल्पित राष्ट्र में इतनी ताक़त थी कि इससे प्रेरित होकर असली राजनीतिक आंदोलन उठ खड़े हुए। बंकिम का *आनंदमठ* (1882) मुसलमानों से लड़कर हिंदू साम्राज्य स्थापित करने वाले हिंदू सैन्य-संगठन की कहानी कहता है। इस एक उपन्यास ने तरह-तरह के स्वतंत्रता-सेनानियों को प्रेरित किया।

इनमें से कुछ उपन्यास हमें राष्ट्र के बारे में एक और तरह से सोचने को मजबूर करते हैं। क्या भारत को सिर्फ़ एक धार्मिक समुदाय का होना था? किन लोगों के पास इस राष्ट्र के वासी होने का क़ुदरती दावा था?

5.1 उपन्यास और राष्ट्र-निर्माण

साहस और शौर्यशाली अतीत के आह्वान के ज़रिए उपन्यास को एक साझे राष्ट्र के अहसास को लोकप्रिय बनाने में मदद मिली। साझा समाज दिखाने का एक और तरीका यह था कि उपन्यास में हर तबक़े या वर्ग के चरित्र गढ़े जाएँ। प्रेमचंद के उपन्यासों में समाज के हर स्तर से आए नानाविध

© NCERT not to be republished

शक्तिशाली चरित्र हैं। वहाँ आपको एक तरफ़ ज़मींदार और नवाब मिलेंगे तो दूसरी तरफ़ किसान और भूमिहीन मज़दूर, मध्यवर्ग के नौकरी-पेशा लोग मिलेंगे तो समाज के हाशिए पर पड़े इनसान भी। उनकी महिलाएँ–ख़ासतौर पर निचले वर्ग की ग़ैर-आधुनिक औरतें–भी ताक़तवर व्यक्तित्व की मालकिन हैं। अपने कई दीगर समकालीनों के विपरीत, प्रेमचंद ने प्राचीन इतिहास से मोह से परहेज़ किया। उनके उपन्यासों में अतीत के महत्त्व को न भूलते हुए भविष्य की ओर देखने की पहल दिखाई देती है।

समाज के विभिन्न तबक़ों से आते प्रेमचंद के पात्र जनवादी मूल्यों पर आधारित समाज बनाते दिखते हैं। *रंगभूमि* का केंद्रीय चरित्र, सूरदास, तथाकथित अछूत जाति का ज्योतिहीन भिखारी है। इस तरह के 'नायक' का चयन अपने आप में ख़ास बात है। संदेश यह है कि सबसे दबे-कुचले-सताए लोग भी साहित्यिक रचना के विषय हो सकते हैं। हम सूरदास को तम्बाकू फ़ैक्ट्री के लिए क़ब्ज़े से अपनी ज़मीन को बचाने के लिए संघर्षरत पाते हैं। कहानी पढ़ते-पढ़ते हमें समाज और आम लोगों के जीवन पर औद्योगीकरण के असर के बारे में सोचने लगते हैं। इससे दरअसल किसका फ़ायदा होता है? क्या इसके हित में जीने के अन्य तरीक़ों की बलि देना ज़रूरी है? सूरदास की कहानी के स्रोत महात्मा गाँधी के व्यक्तित्व और विचारों में खोजे जा सकते हैं।

गोदान (1936) प्रेमचंद की सबसे मशहूर कृति है। यह भारतीय किसानों पर लिखा गया महान उपन्यास है। इस उपन्यास में किसान होरी और उसकी बीवी धनिया की कहानी है। समाज में सत्ता के मालिक लोग–ज़मींदार, महाजन, पुजारी और औपनिवेशिक नौकरशाही–उन्हें अपने दमन के दुष्चक्र में ऐसा फँसते हैं कि वे भूमिहीन मज़दूर बन जाते हैं। पर सबके बावजूद होरी और धनिया आख़िर तक अपनी गरिमा बनाए रखते हैं।

बॉक्स 9

बंकिम की मृत्यु के बाद रबीन्द्रनाथ टैगोर (1861-1941) ने बंगला उपन्यास को और विकसित किया। उनके शुरुआती उपन्यास ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित होते थे। बाद में वे घरेलू संबंधों के बारे में कहानियाँ लिखने लगे। टैगोर मुख्य रूप से औरतों की हालत और राष्ट्रवाद पर लिखते हैं। उनकी ये दोनों चिंताएँ *घरे बायरे* (1916) में दिखाई देती हैं जिसका 1919 में अंग्रेज़ी में द *होम एण्ड द वर्ल्ड* के नाम से अनुवाद किया गया था। यह एक उदारवादी ज़मींदार निखिलेश की पत्नी बिमला की कहानी है। निखिलेश को लगता है कि वह अपने देश के ग़रीब और हाशियाई लोगों की ज़िंदगी में सुधार लाकर देश को बचा सकता है। लेकिन बिमला अपने पति के दोस्त संदीप की ओर आकर्षित है जो चरमपंथी विचारों में विश्वास रखता है। संदीप अंग्रेज़ों को उखाड़ फेंकने के उद्यम में इतना खोया हुआ है कि उसे 'निचली' जातियों और मुसलमानों की बेगानगी के अससास से भी कोई दिक़्क़त नहीं है। संदीप की टोली में शामिल होकर बिमला के भीतर आत्ममहत्त्व और स्वाभिमान की भावना जाग उठती है। रबीन्द्रनाथ ने औरतों के लिए राष्ट्रवादी आंदोलन में हिस्सेदारी के अन्तर्विरोधी प्रभावों को भी दर्शाया है। टोली के युवा सदस्य बिमला की भले ही तारीफ़ करते हों लेकिन इसके बावजूद वह उनके फ़ैसलों को प्रभावित नहीं कर सकती। वस्तुत: संदीप आंदोलन के लिए चंदा इकट्ठा करने में उसका इस्तेमाल ही करता है। टैगोर के उपन्यास इसलिए ध्यान खींचते हैं क्योंकि उनको पढ़कर हम औरत-मर्द के रिश्तों और राष्ट्रवाद दोनों के बारे में, पुनर्विचार को बाध्य हो जाते हैं।

निष्कर्ष

हमने देखा कि अपने इतिहास में उपन्यास किस तरह पश्चिम और भारत दोनों जगहों पर विभिन्न तबक़ों के लोगों की ज़िंदगी का अहम हिस्सा बन जाता है। छपाई की तकनीक में विकास के चलते यह अपने छोटे पाठक-वर्ग से बाहर निकलता हुआ पठन के नए तरीक़े सुझाता है। उपन्यासों ने ऐसे लोगों की कहानियाँ गढ़ीं, जिनके बारे में आमतौर पर शिक्षित व मध्वर्गीय समाज

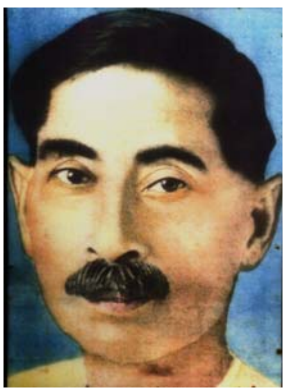

चित्र 26 – प्रेमचंद (1880–1936)।

गतिविधि

गोदान को पढ़ें। संक्षेप में लिखें–

- उपन्यास में प्रेमचंद ने किसानों की ज़िंदगी का किस तरह वर्णन किया है।
- महामंदी के समय किसानों की ज़िंदगी कैसी थी, इसके बारे में उपन्यास हमें क्या बताता है।

© NCERT not to be republished

के बीच जानकारी नहीं के बराबर थी। हमने प्रेमचंद के हवाले से कुछ ऐसी मिसालें देखीं, लेकिन ये उदाहरण दूसरे उपन्यासकारों में भी मौजूद हैं।

भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि के लोगों को एक साथ लाने पर एक साझा सामुदायिक समझ बनती है। ऐसे समुदाय का सबसे ग़ौरतलब रूप राष्ट्र का है। यह बात भी उतनी ही अहम है कि ताक़तवर और कमज़ोर दोनों तरह के लोगों व संस्कृतियों को साथ लाकर उपन्यास इन समुदायों की प्रकृति के बारे में बहुत सारे सवाल खड़े करता है। हम कह सकते हैं कि उपन्यास साझेपन का एक अहसास पैदा करता है और साथ ही अलग-अलग तरह के लोगों, समुदायों और मूल्यों का बोध कराता है। साथ ही विभिन्न समूहों के लोग जिस तरह अपनी पहचान पर सोचते हुए, उस पर सवाल उठाते हैं, उपन्यास हमें इसका भी अंदाज़ा देता है।

© NCERT not to be republished

संक्षेप में लिखें

1 इनकी व्याख्या करें–

(क) ब्रिटेन में आए सामाजिक बदलावों से पाठिकाओं की संख्या में इज़ाफ़ा हुआ।

(ख) राबिन्सन क्रूसो के वे कौन-से कृत्य हैं, जिनके कारण वह हमें ठेठ उपनिवेशकार दिखाई देने लगता है।

(ग) 1740 के बाद ग़रीब लोग भी उपन्यास पढ़ने लगे।

(घ) औपनिवेशिक भारत के उपन्यासकार एक राजनैतिक उद्देश्य के लिए लिख रहे थे।

2. तकनीक और समाज में आए उन बदलावों के बारे में बतलाइए जिनके चलते अठारहवीं सदी के यूरोप में उपन्यास पढ़ने वालों की संख्या में वृद्धि हुई।

3. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखें–

(क) उड़िया उपन्यास

(ख) जेन ऑस्टिन द्वारा औरतों का चित्रण

(ग) उपन्यास *परीक्षा-गुरु* में दर्शायी गई नए मध्यवर्ग की तसवीर

संक्षेप में लिखें

चर्चा करें

1. उन्नीसवीं सदी के ब्रिटेन में आए ऐसे कुछ सामाजिक बदलावों की चर्चा करें जिनके बारे में टॉमस हार्डी और चार्ल्स डिकेन्स ने लिखा है।

2. उन्नीसवीं सदी के यूरोप और भारत, दोनों जगह उपन्यास पढ़ने वाली औरतों के बारे में जो चिंता पैदा हुई उसे संक्षेप में लिखें। इन चिंताओं से इस बारे में क्या पता चलता है कि उस समय औरतों को किस तरह देखा जाता था?

3. औपनिवेशिक भारत में उपन्यास किस तरह उपनिवेशकारों और राष्ट्रवादियों, दोनों के लिए लाभदायक था?

4. इस बारे में बताएँ कि हमारे देश में उपन्यासों में जाति के मुद्दे को किस तरह उठाया गया। किन्हीं दो उपन्यासों का उदाहरण दें और बताएँ कि उन्होंने पाठकों को मौजूदा सामाजिक मुद्दों के बारे में सोचने को प्रेरित करने के लिए क्या प्रयास किए।

5. बताइए कि भारतीय उपन्यासों में एक अखिल भारतीय जुड़ाव का अहसास पैदा करने के लिए किस तरह की कोशिशें की गईं।

चर्चा करें

परियोजना कार्य

कल्पना कीजिए कि आप सन् 3035 के इतिहासकार हैं। अभी आपने दो ऐसे उपन्यास देखे हैं जो बीसवीं सदी में लिखे गए थे। उन उपन्यासों से आपको उस ज़माने के समाज और रीति-रिवाजों के बारे में क्या पता चलता है?

परियोजना कार्य

© NCERT not to be republished